© INTERNATIONAL JOURNAL FOR RESEARCH PUBLICATION & SEMINAR
ISSN: 2278-6848 | Volume: 10 Issue: 04 | October - December 2019
Paper is available at http://www.jrps.in | Email : info@jrps.in

मध्यकालीन संत साहित्य और दलित चेतना

पूजा तिवारी * , डॉ. गुंजन **

*शोधार्थी , हिंदी विभाग , डॉ भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

**एसोसिएट प्रोफेसर, बी॰डी॰के॰एम॰वी॰ , हिंदी विभाग , डॉ भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

Abstract (सार)

भारतीय जीवन में ऐसा समय आया जब सामाजिक ,सांस्कृतिक ,धार्मिक व राजनीतिक परिवर्तनों के फलस्वरुप समाज में विघटन एवं विभाजन की स्थिति उत्पन्न हो गई थी ,जिसने सामाजिक समरसता एवम् लोगों की एकात्म भावनाओं को ठेस पहुंचाया। अराजकता एवं अव्यवस्था की स्थिति ने संपूर्ण सामाजिक परिदृश्य को ही बदल कर रख दिया। यह काल मध्यकाल का था और इसी काल में निर्गुण कवियों ने समाज सुधार का बीड़ा उठाया। संत साहित्य में इन्हीं निर्गुण कवियों के उपदेशों एवम् वाणियों का संकलन है ।संत कवियों ने अपनी खोई हुए प्रतिष्ठा को पुनः पाने का प्रयास किया तथा सामाजिक समरसता, समानता, एकता, धार्मिक सौहार्द एवम् भाईचारे की भावना की स्थापना हेतु जन जन में चेतना फैलाई। संत कवियों ने वर्ण व्यवस्था का घोर विरोध किया एवम लोगों को अन्याय के खिलाफ़ संघर्ष करने को प्रेरित किया।

मध्यकालीन संत साहित्य और दलित चेतना

समाज में परिवर्तन के साथ साहित्य में भी परिवर्तन होता है और दोनों बहुत हद तक एक दूसरे को प्रभावित भी करते । साहित्य ने हमेशा से ही समाज को राह दिखाने का काम किया। समाज के उत्थान एवं परिष्कार में साहित्य का व्यापक योगदान है ।समाज की निरंतरता साहित्य को गति प्रदान करती है अर्थात समाज अपनी व्यवस्थाओं एवं विभिन्नताओं से साहित्य में नए आयामों का सृजन करता है और यही सृजनशीलता साहित्य के युगों युगों तक प्रासंगिक होने का कारण है। समाज की किसी भी व्यवस्था के विस्तार एवं व्यापकता का निर्धारण करना साहित्य का उद्देश्य है। समाज के सामाजिक ,राजनीतिक, आर्थिक पक्षों को वास्तविक रूप में अभिव्यक्त करना साहित्य का उद्देश्य है ।

समाज का स्वरूप हर काल में एक सा नहीं रहता और ना ही साहित्य एक जैसा रहता है। समय ,परिवेश एवं व्यवस्थाओं के साथ उनके स्वरूप में भी निरंतर परिवर्तन होता रहा है ।वर्तमान समाज प्राचीन वैदिक कालीन समाज से बहुत ही अलग है और आने वाला समाज आज के समाज से अलग होगा। किंतु ऐसा मान लेना कि उनमें जरा सी भी साम्यता नहीं रह जाती गलत होगा ।आज के समाज के बारे में आलोचकों ने बहुत कुछ लिखा है “आज समाज से सत्य खंडित हो रहा है, संघर्ष इतना कटु हो गया है कि आदमी अपने भीतर कई मौतें मर रहा है। मनुष्य का विरोधी संस्थाओं और रूढ़ एवं अंध परंपराओं द्वारा स्थापित वर्जनाओं ने मानवता का जबरदस्त अपहरण कर लिया है और मानव मूल्यों के सभी संदर्भ अंधी गुफाओं में भटक गए हैं” 1

मध्यकालिक लोक संक्रमण की स्थिति में थी जहां अराजकता, सांप्रदायिक एवम जातिगत भेदभाव, कर्मकाण्ड एवम् अंधविश्वास में जनता लिप्त थी। ऐसी जनता के उत्थान एवम मुक्ति हेतु संत कवियों ने जनचेतना का

बीड़ा उठाया। मध्यकालीन संत साहित्य की बात करें तो एक बात मुख्य रूप से सामने आती है वह है उनकी मानवतावादी । ऐसा नहीं है कि निर्गुणियों ने ही समाज में व्याप्त कुरीतियों एवं अनाचारों को उजागर करने की शुरुआत की बल्कि इससे पहले भी बौद्ध एवं जैन साहित्य, सिद्धू एवं नाथों के साहित्य में भेदकारी सामाजिक व्यवस्था के प्रति विरोध मिलता है । सिद्धों एवम् नाथों में तो कई शुद्र जाति के थे ।इन संत कवियों ने जाति को निस्सार बताते हुए उसका प्रबल विरोध किया । इनकी वाणियों में सामाजिक कुरीतियों , धार्मिक कर्मकांड व आडंबर के विरुद्ध गहरे आक्रोश को देखा जा सकता है । यह बिल्कुल सही है कि मध्य युग में जनचेतना व समाज सुधार की कोशिश अपने सर्वोच्च शिखर पर पहुंच चुकी थी इस कोशिश को सही जामा पहनाने का काम संतकवियों ने किया। संत कवियों में मूल रूप से कबीर, रैदास, नानक ,दादू दयाल आदि महापुरुषों ने एक स्वस्थ समाज की स्थापना एवं मानवता की रक्षा के लिए अपने कर्तव्यों के प्रति प्रतिबद्ध है।
जब कबीर कहते हैं “जात पात पूछे ना कोई,हरि को भजो सो हरि का होई” 2

या

"सन्तों देखहु जग बैराना ।

हिंदू कहे मोहे राम प्यारा, तुरक कहे रहमाना ।

आपस में दोऊ लर-लर गुए, मरम न काहू जाना। "3

तब वह जाति आधार पर हो रहे भेदभाव एवम सांप्रदायिकता का खंडन करते हैं। उन्होंने मानव को जीव मात्र के रूप में देखे जाने की कल्पना की है जहां उसे उसकी जाति ,धर्म ऊंच नीच के धंधों से परे जाकर देखा जाता हो।

रविदास कहते हैं “नागर जना मेरे जाति विख्यात चमार” 4

यहां पर रविदास ने खुद की जाति बताकर दलितों के मन से जातीय हीनता के बोध को निकालना चाहा है। संतो ने अपनी वाणी से तत्कालीन समाज को न सिर्फ प्रभावित किया बल्कि समाज में जाति धर्म नस्ल हैसियत आदि के आधार पर उपेक्षित किए गए वर्ग का भी प्रतिनिधित्व किया। वास्तव में मध्य काल के साहित्य में जनमुक्ति एवं जन चेतना का स्वर मुखरित हुआ था वह इनकी वजह से हुआ। इन निर्गुण कवियों ने एक सच्चे समाज सुधारक की भूमिका निभाई। समाज में उनके योगदान की दृष्टि से उनको संत कहना गलत नहीं होगा। वे समाज को स्वस्थ एवं सबके लिए समान बनाने हेतु निरंतर प्रयासरत रहे। मध्यकालीन संतों की वाणी का मुख्य स्वर आक्रोश है। मानव जाति के उद्धार का सपना देखते हैं इसके साथ ही साथ उन्होंने उस सामाजिक ढांचे का भी विरोध किया जिसने असमानता, धार्मिक एवं सामाजिक कुरीतियों के बीज बोने का काम किया। उन्होंने वर्ण व्यवस्था जाति प्रथा ,दलितों एवम् गरीबों के प्रति अत्याचार का विरोध किया। कबीर,रैदास, दादू ऐसे ही संत कवि थे जिन्होंने बिना किसी स्वार्थ तत्कालीन सामाजिक अव्यवस्था का निडरता पूर्वक प्रतिकार किया। उन्होंने मानव जीवन के अपने अनुभवों को चेतना का विषय बनाया।

संत कवियों ने जितने बौद्धिक एवं नीतिगत शिक्षाओं का प्रचार किया उसे समझ कर कहीं से भी यह नहीं लग सकता कि वह शिक्षित नहीं थे और ना ही उन्हें शास्त्रों का ज्ञान नहीं था। वास्तव में अधिकतर संत कवि शिक्षित नहीं थे और उन्हें अक्षर ज्ञान नहीं था । उन्होंने तो बस अपने अनुभवों एवं दूरदर्शिता का परिचय देते

हुए अपनी वाणी से जन-जन को जागरूक करने का प्रयास किया। इन्होंने जितनी भी शिक्षाएं दी वह जन भाषा में ही दी। उन्होंने अपने जीवन के अनुभवों को बड़ी ही सच्चाई के साथ अभिव्यक्त किया। यह सबसे ज्यादा महत्व सर्व मानवतावाद की स्थापना को देते थे और जीवन के अंतिम क्षण तक धार्मिक एवम् जातिगत संकीर्णता से मनुष्य एवं समाज को बचाने की कोशिश करते रहे । संत कवियों ने समाज में व्याप्त दमन और शोषण के विविध स्वरूपों को रेखांकित किया है सामाजिक असमानता ,अपमान, दुर्व्यवहार,अनैतिक आचरण आदि से उपजे विक्षोभ को इनकी वाणी में प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है। संत साहित्य ने हिंदी साहित्य के लिए ही नहीं बल्कि संपूर्ण भारतीय समाज के लिए एक नए दृष्टिकोण का निर्माण किया। अपनी वाणी में समता ,सम्मान, अहिंसा, सत्य, प्रेम व भाईचारे के संदेश को उन्होंने प्रेषित किया ।

इन्होंने परंपरागत सामंती व्यवस्था ब्रह्मणवादी मानसिकता व शोषणकारी व्यवस्था का तर्कों के साथ विरोध किया ।संत कवियों ने जिस सामंती व्यवस्था से लोहा लिया वहां समाज और मानवीय मूल्यों में गहरा विरोध झलकता था। धीरे-धीरे समाज की परिस्थितियों में परिवर्तन आ गया मानवीय मूल्यों एवं विचारों में कोई भी विकास दिखाएं लोग अब भी पुरानी मान्यताओं एवं रूढ़ियों को मानते थे साथ ही अंधविश्वास पर असत्य आदि क्रियाओं में लिप्त। संतों की कोशिश ने लोगों में नई चेतना और नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता फैलाई। उनका उद्देश्य विलुप्त होते नैतिक मूल्यों एवं मानवीय संवेदनाओं को पुनः स्थापित करना था। इस प्रकार संतों की वाणी में मुक्ति के स्वर को मुखरित होते हुए देखा जा सकता है ।सबसे प्रमुख बात यह है कि इन्हें किसी भी प्रकार का भय नहीं था यह ना तो किसी के शासन से डरते थे ना ही किसी शासक थे। इन्होंने पूरे उन्मुक्त भाव से समाज के वास्तविक चित्र को उद्घाटित किया। मध्ययुगीन बर्बरता ने समाज में विद्रोह का सृजन किया। इसके परिणामस्वरूप एक ऐसा वर्ग संत कवियों के रूप में उभर कर सामने आया जो किसी भी परिस्थिति में शोषण झेलने को तैयार नहीं था। इन्होंने समाज के उस वर्ग को सहारा दिया जो शोषण की जद में आकर जीने की इच्छा ही खो बैठे थे ,उन्हें अपनी नियति में शोषण दमन मिल रहा था। किंतु कबीर रैदास आदि संतों ने लोक में चेतना का संचार किया , उन्हें उनके अधिकारों से अवगत कराया। मध्ययुगीन संत कवियों ने जिस स्थिति को व्यक्त किया था वर्तमान में उसका स्वरूप और ज्यादा व्यापक और विस्तृत हो चुका है आज उसे हम अस्मिता विमर्श के अंतर्गत पढ़ते हैं । यह हिंदी साहित्य का एक बहुआयामी भाग है । सामाजिक विषमता के दंश को उन्होंने स्वयं झेला और इसी अनुभूति ने उन्हें इतनी सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान की ।उन्होंने सामाजिक धरातल पर हो रहे भेदभाव का विरोध किया। मध्ययुगीन भक्ति आंदोलन को उच्च वर्ण के विरुद्ध निम्न वर्ण का विरोध माना जा सकता है। मध्यकालीन संत कवियों को लोक कवि भी कहा जाता है। इन संत कवियों में भले ही अभिजात्यता एवम् शास्त्रीयता की कमी हो किंतु यह व्यवहारिक ज्ञान से संपन्न सरल लोग थे जिनकी जीवन पद्धति पूर्ण रूप से अकृत्रिम थी । भक्ति आंदोलन का जनसाधारण पर जितना व्यापक असर पड़ा उतना किसी अन्य आंदोलन का नहीं ।पहली बार निम्न वर्ग में भी संतों की उत्पत्ति हुई है। कबीर, रैदास , नाभा ,दादू दयाल, सेना आदि महापुरुषों ने ईश्वर के नाम पर फल फूल रहे जातिवाद के विरुद्ध आवाज उठाई एवं सामाजिक अनाचार के प्रति प्रतिकार किया। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने अपनी किताब who were the shudras में यह स्पष्ट किया है कि मनुस्मृति के पूर्व भी जाति व्यवस्था विद्यमान थी, मनुस्मृति में तो बस उसे विस्तार पूर्वक संकलित किया गया है एवं उनकी सामाजिक व अन्य स्थितियों का निर्धारण किया गया है।

© INTERNATIONAL JOURNAL FOR RESEARCH PUBLICATION & SEMINAR
ISSN: 2278-6848 | Volume: 10 Issue: 04 | October - December 2019
Paper is available at http://www.jrps.in | Email : info@jrps.in

इससे यह तो तय हो जाता है कि वर्ण व्यवस्था बहुत प्राचीन है। इस बहु प्राचीन वर्णाश्रम व्यवस्था ने विशेषकर दलितों, गरीबों, स्त्रियों की स्थिति को नारकीय बना दिया।

प्रारंभ में चतुर्वर्ण का सृजन समाज को जोड़ने के उद्देश्य से किया गया था किंतु कालांतर में इसका स्वरूप भयानक होता चला गया। धीरे-धीरे इसी वर्ण व्यवस्था ने समाज को तोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई ।प्राचीन काल में वर्ण व्यवस्था का निर्धारण कर्म के आधार पर होता था किंतु समस्या तब उत्पन्न हुई जब वर्ण व्यवस्था ने जातिगत आधार पर अपना वर्चस्व स्थापित किया। मध्यकालीन संत कवियों ने सम्मिलित रूप से अपने अपने स्तर पर इस भेदकारी परंपरा एवं मानसिक यातनाओं के खिलाफ आवाज उठाई। इनकी प्रखर वाणी में पहली बार पूरी सच्चाई और ईमानदारी से उनके अधिकारों की बात कही और जाति या वर्ण के आधार पर हो रहे उत्पीड़न के प्रति जन जन में चेतना का प्रसार किया। इन्होंने अपने तर्कों एवं उदाहरणों के माध्यम से शोषणकारी सत्ता को ललकारा।

यंग इंडिया में गांधी ने लिखा है "मैं फिर से जन्म लेना नहीं चाहता लेकिन मेरा पुनर्जन्म ही तो मैं अछूत पैदा होना चाहूंगा ताकि उनके दुखों का भागीदार बनकर स्वयं को स्थिति से छुटकारा दिलाने का प्रयास कर सकूं"। 5

वास्तव में संत कवियों ने लोक चेतना का बीड़ा इसीलिए उठाया क्योंकि समाज की कुव्यवस्था एवम् शोषणकारी सत्ता द्वारा एक ख़ास वर्ग का शोषण किया जा रहा था ।उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता था। उन्हें असमानता एवं अपमान के घूंट पीने को विवश होना पड़ रहा है। संत कवियों ने इस वर्ग को मुख्यधारा में लाने का प्रयास किया जिसे तब तक हेय की दृष्टि से देखा जाता था। वर्तमान दलित साहित्य मध्यकालीन संतों की वाणी में मुखरित होता हुआ आज के विकसित और सशक्त परिपाटी तक पहुंच चुका है संत कवियों के योगदान को नहीं भूल सकते संत कवियों ने एक ऐसे समाज की परिकल्पना की जहां पर हर वर्ग के लोगों को प्यार व सम्मान मिले , किसी भी आधार पर भेदभाव ना हो और जहां हर व्यक्ति की पहचान केवल व्यक्ति के रूप में हो ना कि किसी खास धर्म या जाति के रूप में। संत कवियों की वाणियों में दलित चेतना का जो स्वर मुखरित हुआ है वही आज के अस्मिता विमर्श की प्रेरणा बनकर सामने आई । ओम प्रकाश वाल्मीकि का कहना है " की व्यथा, दुख, पीड़ा, शोषण का विवरण देना या बखान करना ही दलित चेतना नहीं है, या दलित पीड़ा का भावुक और अश्रु विगलित वर्णन, जो मौलिक चेतना से विहीन हो, चेतना का सीधा संबंध दृष्टि से होता है जो दलितों की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक भूमिका के तिलिस्म को तोड़ती है, वह है दलित चेतना|' 6

संत कवियों ने समाज में एक नई दृष्टि का विन्यास किया आज मानव मूल्यों को और अधिक संजोकर रखने की जरूरत है क्योंकि किसी भी समाज या राष्ट्र के उत्थान एवं पतन में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जिस भी समाज से इसका लोप हो जाएगा वह रहने लायक नहीं बचेगा। यही कारण है कि संत कवियों ने समाज सुधार में अपना योगदान दिया। अब यह हमारी जिम्मेदारी है कि हम अपनी क्षमता के अनुसार इस ओर कदम बढ़ाए तथा एक समावेशी विकास एवं सशक्त राष्ट्र की स्थापना को रूप दे सके।

© INTERNATIONAL JOURNAL FOR RESEARCH PUBLICATION & SEMINAR
ISSN: 2278-6848 | Volume: 10 Issue: 04 | October - December 2019
Paper is available at http://www.jrps.in | Email : info@jrps.in

संदर्भ

1. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास में मानव मूल्य और उपलब्धियां ,डॉ भागीरथ बडोले,स्मृति प्रकाशन इलाहाबाद पृष्ठ 273

2. कबीर ग्रंथावली,श्यामसुंदर दास

3. कबीर ग्रंथावली,श्यामसुंदर दास

4. रैदास बानी ,संपादक डॉ सुखदेव सिंह ,पृष्ठ 151

5. यंग इंडिया, 4.5.1921 ,पृष्ठ 144

6. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, ओमप्रकाश वाल्मीकि, राधाकृष्ण प्रकाशन ,दिल्ली, 2001, 28 -29